ब्रह्मवादिनी के कर्त्तव्य

प्रतिभा गर्ग
अध्यक्ष - अभय जैन ग्रन्थालय
बीकानेर

वैदिक-संहिताओं में नारी के विवाहित तथा अविवाहित दोनों रूपों का नितान्त गौरवपूर्ण इतिहास मिलता है। विवाह के पश्चात् जिनका अध्ययन अवरुद्ध हो जाता था, वे सद्योद्वाहा कहलाती थीं और दूसरी ओर अपने पिता या माई के घर अविवाहित रहकर जिनका अध्ययन-अध्यापन आजीवन चलता था, वे ब्रह्मवादिनी के नाम से जानी जाती थीं। आजीवन कौमार्यव्रत धारण करने वाली इन नारियों का समाज में बड़ा आदर था; क्योंकि जन-कल्याण हेतु इनके विविध कार्य चलते रहते थे। ऐसी ज्ञानी नारियों को समाज में पुरुषवर्ग के समान ही प्रचार-प्रसार का पूर्ण अधिकार था।

ऋक्-संहिता (७/४०/७) में ब्रह्मवादिनी, अध्ययन-अध्यापन तथा समाज को उपदेश देने वाली नारियों के गुणों का वर्णन करते हुए कहा गया है- "हे पूषन् ! सरस्वती और देव-नारियाँ हमें जो धन देती हैं, उसमें आप बाधक न बनें, कल्याण-दाता देवगण हमारी रक्षा करें और जल-वृष्टि दें"। इस मन्त्र में सरस्वती एवं अन्य देवियों द्वारा दिये गये धन में बाधक न बनने की बात कही गयी है। यह कौन सा धन था, जिसको रक्षा एवं प्राप्ति के लिये व्यग्रता व्यक्त की गयी है। हमारी दृष्टि से यह वही धन है, जिसका उपदेश स्थान-स्थान पर इन ऋषिकाओं ने किया है, जो संहिताओं के सूक्तों का साक्षात्कार करने के कारण कवित्रियाँ भी मानी गयी हैं।

घोषा-

महर्षि कक्षीवान् की पुत्री है और शरीर में श्वेत दाग (कोढ़) होने के कारण विवाह के अयोग्य ठहराई जाती है। अन्त में अपनी तपश्चर्या से अश्विनीकुमारों को प्रसन्न करती हुई दिव्य-काया पा जाती है। इस ब्रह्मवादिनी नारी ने स्वयं ब्रह्मचारिणी के रूप में ब्रह्मचर्य का उपदेश तथा कन्या के समस्त कर्तव्यों का जो उल्लेख ऋक्-संहिता के दशम-मण्डल के ३९वें एवं ४०वें सूक्तों में किया है, वह निःसन्देह भारतीय-संस्कृति की अमर-निधि है। उदाहरणार्थ ऋक्संहिता (१०/४००१०) को ही देखें, जिसमें "घोषा" ने अश्विनीकुमारों को सम्बोधित करते हुए कहा है- "हे अश्विनीकुमारों ! जो लोग अपनी पत्नी की रक्षा हेतु चिन्तातुर रहते हैं और उन्हें यज्ञादि कर्तव्यों में लगाते हैं, उनकी स्त्रियाँ सुख से रहती हैं"।

"घोषा" की स्पष्ट घोषणा है, इसी सूक्त की पाँचवीं ऋचा में कि "मैं राजकुमारी "घोषा" सब ओर घूमती हुई गुणानुवाद एवं चिन्तन करती हूँ"।

"घोषा" का यह कथन कितना हृदयग्राही है, जब वह ऋक्-संहिता (१०/३९/६) में प्रार्थना करती हुई कहती है- "हे अश्विनीकुमारों! मैं तुम दोनों को बुलाती हूँ, सुनो। पिता जैसे अपनी सन्तति को उपदेश देता है, वैसे ही आप मुझे शिक्षा दें। मेरा कोई यथार्थ बन्धु नहीं है। मेरा कुटुम्ब भी नहीं है और न मेरे पास बुद्धि-बल ही है, आप मेरी रक्षा करें"।

घोषा" द्वारा प्रतिपादित ऋक् संहिता के दशम मण्डल के ३९वें सूक्त के मन्त्र ६, ७ और १४ से स्पष्ट है कि उस समय नारी अपने उपदेशात्मक कार्य के लिये स्वतन्त्र थी, स्त्रियां रथ-निर्माण में भी दक्ष थीं एवं कन्याओं को वस्त्राभूषणों से अलंकृत कर पति के घर भेजा जाता था। इसके अतिरिक्त ऋक्-संहिता (१०/४०/१०) में स्पष्ट संकेत है कि उस समय नारी को यज्ञादि-अधिकार के साथ सामाजिक समादर भी सुलभ था, जिसका डिण्डिमघोष "घोषा" ने किया है।

रोमशा-

ब्रह्मवादिनी रोमशा (लोमशा) द्वारा दृष्ट ऋक् संहिता (१।१२६/६-७) सूक्त में नारी के गौरव की चर्चा का उपदेश देते हुए कहा गया है-"नारी को अल्प गुणों वाली न समझो। यह गान्धारी के समान रोम एवं अवयवों से पूर्ण है"। आगे कहा गया है- "हे प्रियतम ! आप मेरे समस्त अंगों का अवलोकन करें, इनमें आपको कहीं भो कोई अभाव दृष्टिगोचर नहीं होगा"।

"रोमशा" को वृहस्पति को पुत्री एवं "भावभव्य" को धर्मपत्नी माना गया है। कहा जाता है कि इनके पूरे शरीर में रोमावली थो, इसी कारण इनके विवाह-कार्य में बाधा थी। नारी-समाज में बुद्धि-विकास का उपदेश देना इनका मुख्य विषय था। रोमशा-शब्द की सार्थकता के विषय में कहा गया है-इस नारी के प्रत्येक रोम में शास्त्रीय-ज्ञान था, इसलिए इस नारी को "रोमशा" कहा गया है।

सूर्या-

ब्रह्मवादिनी "सूर्या" ने अपने दृष्ट ऋक्-संहिता (१००८५) सूक्त में विवाह-सम्बन्धी जितना सुंदर विवेचन किया है, सम्भवतः उसका दूसरा उदाहरण यदि अन्यत्र असम्भव नहीं, तो दुर्लभ अवश्य कहा जा सकता है। इस सूक्त में आध्यात्मिक, आधि-दैविक एवं आधिभौतिक ती+नों तत्त्वों का सम्मिश्रण है। "सूर्या" के उपदेश का सारांश है- "हे बहू ! पति के घर ऐसी वस्तुओं का संग्रह करो, जो तुमको भी प्रिय हों। मैले कपड़ों को साफ करो। गन्दे कपड़े पहनने से और नित्य स्नान न करने से शरीर में रोग उत्पन्न होते हैं। यदि तुम रोगी हो जाओगी, तो सम्पर्क के कारण तुम्हारे पति के शरीर में भी विविध रोग फैल जायेंगे। अतः पति के हित को ध्यान में रखते हुए नारी को स्वच्छ एवं पवित्र रहना चाहिए; क्योंकि पति अपने सौभाग्य- वर्धन हेतु नारी का पाणिग्रहण करता है"। इस प्रकार सूर्या ने अपने उपदेश से गृहस्थ नारियों को सदुपदेश दिया है।

विश्ववारा-

ब्रह्मवादिनी विश्ववारा द्वारा दृष्ट ऋक्संहिता (५।२८) सूक्त का सारांश है कि स्त्रियों को सावधान-चित्त से अतिथि सत्कार करना चाहिए। अग्निहोत्री अपने पति के यज्ञकुण्ड की पूरी देखभाल करनी चाहिए-यही नारी का पुनीत कर्तव्य है। अग्निदेव की प्रार्थना करते हुए इस सूक्त की तीसरी ऋचा में कहा गया है-"हे अग्नि ! महासौभाग्य की प्राप्ति हेतु आप बलवान् बनें, आपके द्वारा प्राप्त धन परोपकार में लगे, स्त्रियों का दाम्पत्य-सम्बन्ध सुदृढ़ हो एवं दुष्कर्म, लोभादि पर आपका आक्रमण हो"।

अन्य ब्रह्मवादिनियाँ -

दीर्घतमा ऋषि की पत्नी, महर्षि काक्षीवान् तथा दीर्घश्रवा की माता एवं प्रसिद्ध ब्रह्मवादिनी घोषा की पौत्री का नाम "उशिज" था, जिसने ऋक्संहिता के प्रथम-मण्डल के ११६ से १२१ मन्त्रों का संकलन किया था। इस ऋषिका की सास का नाम "ममता" कहा गया है। ऋक्संहिता के अष्टम-मण्डल के प्रथम सूक्त की ३४वीं ऋचा की द्रष्ट्री "शश्वती" ब्रह्मवादिनी थी। अङ्गिरा ऋषि की पुत्री शश्वती के पति ये महाराज "आसंग"। इस ऋचा में अतीव श्रेष्ठ उपदेश हैं। ब्रह्मवादिनी "वाक्" अभृण ऋषि की पुत्री थीं, जिन्होंने ऋक्संहिता के दशम-मण्डल के १२५वें सूक्त का साक्षात्कार किया था। इस सूक्त में अद्वैतवाद के सिद्धान्तों का प्रतिपादन है, जिनके आधार पर भगवान् शङ्कराचार्य ने अपने अद्वैतवाद का प्रचार-प्रसार किया। इस सूक्त में नारी के पौरुष का बड़ा ही सजीव वर्णन है। यहाँ नारी को ही आद्या-शक्ति मानकर कहा गया है- "मैं जिस पुरुष की रक्षा करना चाहती हूँ, उसे और लोगों को अपेक्षा अधिक बलशाली बनाकर उसमें उत्तम मेधाशक्ति भर देती हूँ"।

यह वैदिक-संहिताकालीन सुख-सुविधाओं का ही सुफल था कि उस समय श्रद्धा-कामायनी (ऋ० १०/१५१), ब्रह्मजाया "जुहू" (ऋ० १०/१०९), शची पौलोमी (ऋ० १०/१५९) आदि अनेक ऋषिकाएँ उत्पन्न हुईं, जिन्होंने सामाजिक सुव्यवस्था हेतु अपने उपदेशों से नारी को कर्तव्य-बोध कराते हुए भारत को भारत बनाये रखने में अपना अमूल्य योगदान दिया।

दासी (उपपत्नी) -

संहिताओं में "दासी" (अनार्या लड़की) शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग अथर्व-संहिता (१२।३।१३ एवं १२/४/९) में दृष्टिगोचर होता है। "दासी" शब्द का प्रयोग तैत्तिरीय- संहिता में "गवां सत्र" के अवसर पर सिर पर पानी का कुम्भ रखकर अग्नि के चारों ओर प्रदक्षिणा करने वाली नारियों के लिए हुआ है'।

ऋक्संहिता (५/३४।६, ६/२२/१०, ६/३३/३, ६/६०/६, १०३८/३, १०८३।१ आदि) में "दास" शब्द का प्रयोग अनेक बार दस्यु या दानव अर्थ में आया है। इन दासों के पास उस समय अतुल चल-अचल सम्पत्ति थी; किन्तु समाज में

उनका आदर न था। आर्यों के साथ युद्ध में जब ये दास मरते थे, तो उनकी पत्नियों को बन्दी बनाकर विजेता लोग अपने घरेलू कार्यों में लगा लेते थे। कभी-कभी ये दासियाँ घर की उपपत्नी बनने का गौरव भी प्राप्त कर लेती थी (ऐ० ब्रा० २।९)। ऋक्संहिता में इन्द्र से एक सौ भेड़ें, एक सौ गधे और एक सौ दास प्रदान करने की बात कही गयी है। ऋक्संहिता (७।६।३) में पणि और दास शब्द का प्रयोग एक साथ करते हुए कहा गया है- "यज्ञ-विमुख, कटुवक्ता, दुर्बुद्धि वाले इन पणियों को अग्निदेव दूर रखें और इनका पतन करें"। इन पणियों की विस्तृत गतिविधियों का परिचय ऋक् संहिता (१०/१०८) के "पणि-सरमा" संवाद-सूक्त में मिलता है। ऋक्संहिता (४।२८/४) में "विशोदासी ", (ऋ० ४।३२।१०) "पुरोदासी", (ऋ० ५।३०।५) "दास-पत्नी" आदि शब्दों का प्रयोग मिलता है; परन्तु इन शब्दों का प्रयोग यहाँ घर में काम करने वाली नारियों के अर्थ में नहीं है; क्योंकि इनका प्रयोग विशेषण के रूप में यहाँ हुआ है। इससे स्पष्ट है कि ऋक् संहिता के समय तक दास या दासी प्रथा प्रचलित नहीं थी।

संहितोत्तर-काल में दास-दासियों को निजी सम्पत्ति मानकर दिये जाने के भी प्रमाण मिलते हैं। उदाहरणार्थ ऐतरेय ब्राह्मण (८।४।४४) में- "दशनागसहस्राणि दशदासीसहस्राणि ददामि" कहा गया है। दासियों का कर्तव्य था कि वे अपने स्वामियों की आज्ञा का बेरोक-टोक पालन करें।

साधारणी (गणिका) -

ऋक्संहिता (११६७४) में आकाश में कभी चमकती, कभी कड़कती और कभी छिपती हुई विद्युत् की तुलना मनुष्यों की गुप्तरूप में रहने वाली उपपत्नी से की गयी है। यहाँ "साधारणी" शब्द का प्रयोग किया गया है, जो सम्भवतः उस समय की नगर-वधुओं (वेश्याओं) का परिचायक है। "नर्तकी" (ऋ० १।९२।४) और "गर्तारुगिव सनये" (ऋ० १।१२४।७) आदि शब्दों का प्रयोग भी किया गया है, जिनसे उस समय को सर्वतन्त्र स्वतन्त्र नारियों का बोध होता है, जो अपने निजी स्वार्थ हेतु पर-पुरुष का संसर्ग करती थीं। अथर्वसंहिता के चौदहवें तथा बीसवें काण्ड में अनेक बार नग्नी, महानग्नी, पुंश्चली (व्यभिचारिणी) आदि शब्दों का प्रयोग हुआ है, जिससे उस समय की गणिका-वृत्ति का अनुमान लगाया जा सकता है।

"अतीतवरी" शब्द का प्रयोग मनचली महिला के लिये वाजसनेयि-संहिता (३०।१५) में और "रामा" शब्द का प्रयोग तैत्तिरीय-संहिता (५।६।८।३) में हुआ है।

नारी-समाज की भूरि-भूरि प्रशंसा करने वाली वैदिक-संहिताओं में यत्र-तत्र नारी की निन्दा-परक उक्तियाँ भी मिलती हैं। यथा- ऋक्संहिता (१०।९५।१५), जिसमें नारियों के हृदय की तुलना भेड़िये के हृदय के साथ की गयी है और मैत्रायणी-संहिता (१।१०।११) में नारियों को असत्यवादिनी कहा गया है। लगता है कि ये कथन सभी नारियों के लिये नहीं थे; अपितु उपर्युक्त साधारणी आदि नारियों के लिए ही प्रयुक्त होते थे, जो स्वतन्त्र-बुद्धि से अपना जीवन-यापन करती थीं।